आनन्दोऽहम् (मैं ही आनन्द हूँ)

रीता नागपाल*

मानव जीवन अति मूल्यवान् व दुर्लभ है। ईश्वर ने हमें अन्य सभी जीवों से श्रेष्ठ बनाया है। हमें चिंतनशील बुद्धि और विवेक दिया है और इसी आन्तरिक श्रेष्ठता के आधार पर हमारी श्रेष्ठता प्रमाणित होती है। परन्तु सवाल यह है कि आखिर ईश्वर ने हमें क्यों बनाया है? और हम इस धरती पर क्यों आए हैं? इसका जवाब इतना सुलभ नहीं... मानव-जीवन जैसा अलभ्य अवसर पाकर भी यदि उसका उद्देश्य नहीं जाना तो क्या मनुष्य जीवन और क्या पाशविक जीवन। बड़े-बड़े विद्वानों और बुद्धिजीवियों का जीवन को लेकर अलग-अलग नजरिया देखने को मिलता है। भले ही कैसा ही नजरिया हो अथवा कोई भी परिभाषा हो, परन्तु यह तो तय है कि ईश्वर ने हमें दुःख भोगने या हमारी परीक्षा लेने के लिए तो यहाँ नहीं भेजा, अपितु हम यहाँ आए हैं सम्पूर्ण आनन्द की अनुभूति करते हुए एक सुखमय और श्रेष्ठ जीवन बिताने। तो उस आनन्द को पाने से हमें कौन रोक रहा है? हम कब, क्यों और कैसे अपने ही इस जन्मसिद्ध अधिकार (आनन्द प्राप्ति) से दूर हो गए?

वास्तविकता यह है कि अपनी इस स्थिति के लिए हम खुद ही जिम्मेदार हैं। क्योंकि जब तक हम बच्चे थे, निष्कपट व मासूम थे, अपने परमात्मा से जुड़े थे, तब हम अपने इसी आनन्द स्वरूप में स्थित थे। तब हम हर हाल में खुश रहते थे - केवल पेट भरा हो बस और कुछ नहीं चाहिए। फिर भले ही कपड़े फटे हों, पांव नंगे हों या फिर बिना बिस्तर के ही सुला दिया जाए- हर हाल में खुश अर्थात् जो जैसा है ठीक है, स्वीकार है, कोई बाधा नहीं, कोई प्रतिरोध नहीं, सदा प्रकृति के बहाव के साथ बहते हैं। परन्तु जैसे-जैसे यह बच्चा बड़ा होता है, तो उसे हर चीज में कुछ न कुछ गलती या कमी नजर आने लगती है। हम किसी भी व्यक्ति, परिस्थिति अथवा किसी भी रिश्ते को और यहाँ तक की स्वंय अपने आप को भी पूर्णतः स्वीकार नहीं कर पाते। इसलिए कभी अहंकारवश, कभी ईर्ष्यावश, कभी अज्ञानवश, कभी क्रोधवश, कभी अविश्वास या अपराध बोध के कारण अपने ही हाथों अपने जीवन से आनन्द को सदा के लिए निष्कासित कर देते हैं और पीछे रह जाती है अंतहीन उदासीनता, नकारात्मकता, रिक्तता, अकेलापन और ढेरों शिकायतें .....

तो क्या इस आंनद को वापस पाने का और इसी में स्थाई रूप से स्थापित होने का कोई उपाय नहीं है? अवश्य है!! जैसा कि किसी ने क्या खूब कहा है "**Pain is Optional**" अर्थात् पीड़ा सहना हमारा अपना चुनाव है! तो हम पूर्ण होश से 'परमानन्द', जो कि हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है, उसका चुनाव करें, और सदैव आनन्दमय जीवन ही जियें, भले ही इसके लिए हमें कुछ प्रयास ही क्यों न करना पड़े। तो आइए परमानन्द की ओर अपने होशपूर्ण कदम बढ़ाएँः-

1. **अपना प्रत्येक दिन सकारात्मक विचार के साथ शुरू करें** - हर दिन की शुरुआत सकारात्मक विचार के साथ करें और धीरे-धीरे अपने सभी विचारों को सकारात्मक बनाएँ क्योंकि सकारात्मक विचारों के बीजों से ही सकारात्मक पौधों और फलों की उत्पत्ति होगी और हमारे चारों तरफ सकारात्मकता होगी। ऐसा करने से हमारी छोटी-बड़ी समस्याएं और शिकायतें गौण होती जाएंगी और हम परमानन्द की ओर अग्रसर होगें।

2. **वर्तमान में जीने के प्रयास करें** - व्यक्ति अपना अधिकांश समय भूतकाल में हुई घटनाओं तथा गलतियों का अफसोस करते हुए अथवा भविष्य की चिन्ता करते हुए बिता देता है। भूतकाल पीछे छूट चुका है और बदला नहीं जा सकता है। केवल उससे हम कुछ सबक ले सकते हैं। भविष्य अभी आया नहीं है। हम उसके लिए चिन्ता अथवा भय करने के स्थान पर स्वयं

* एसोसिएट प्रोफेसर, वाणिज्य विभाग, दयाल सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

को तैयार कर सकते हैं। साथ ही यह याद रखना बहुत जरूरी है कि इन दोनों ही से अधिक महत्वपूर्ण है - हमारा वर्तमान (**Present**)। **Present** का अर्थ होता है- 'उपहार' अर्थात्- हमारा वर्तमान ईश्वर का दिया हुआ उपहार है। भूत और भविष्य की भूल-भूलैया में हम इस अनमोल उपहार को नकार देते हैं। यदि हम 'आज और अभी' में जीना सीख जाएं तो भूतकाल की ग्लानि और भविष्य की चिंता को भुला कर 'आज का आनन्द' ले पाएंगे।

3. **क्रिया-प्रतिक्रिया में संतुलन रखें** - किसी भी परिस्थिति में क्रिया का अनुपात मात्र 10-20% प्रतिशत होता है और हमारी प्रतिक्रिया का अनुपात 80-90%। भले ही क्रिया हमारे वश में न हो परन्तु प्रतिक्रिया अवश्य हमारे वश में होती है। यदि हम अपनी प्रतिक्रिया को पूर्णतः नियंत्रित और संवेदनशील बना लें तो न केवल प्रतिक्रिया के बाद में होने वाले अपराध-बोध और ग्लानि से स्वयं को सुरक्षित रख सकेंगे अपितु बहुत से कटु अनुभवों से भी बच सकेंगें और सुखमय जीवन का आनन्द ले सकेंगें।

4. **स्वीकार करें** - जो जैसा है, उसे वैसा ही स्वीकार करने का प्रयास करें और प्रकृति के नियमों के साथ समन्वय बनाएं। प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर का अंश है और उस की बेहतरीन रचना है। हमें इस सत्य को पूरे मन से स्वीकार करना चाहिए। परन्तु इस का अर्थ यह भी नहीं है कि अपने आस-पास गलत होते देख कर आंखे मूँद लें। हमें न केवल गलत करने वालों को समझाना चाहिए, अपितु आवश्यकता पड़ने पर फटकारना भी चाहिए। परन्तु किसी को भी अपने अधीन करके अपने फैसले मानने के लिए बाध्य नहीं करना चाहिए, क्योंकि हर व्यक्ति का अपना एक दृष्टिकोण होता है और उसका हर कार्य तर्कसंगत भी होता है, जो कि उसके नजरिए से पूर्णतः सही होता है। इसलिए अनचाहे व्यक्ति अथवा परिस्थिति को अगर सुधार सकें तो सुधारें अथवा उसके लिए दुखी होने के बजाए अपने प्रभु की इच्छा मान कर उसे स्वीकार करने में ही समझदारी एवं आनन्द है।

5. **समभाव जाग्रत करें** - सुख-दुःख, खुशी-गम, दिन-रात आदि हमारे जीवनरूपी चक्र के भाग हैं। इसलिए हम सभी ने दोनों का ही अनुभव किया है। दुःख में दुखी होना स्वाभाविक है, जैसे रात होने पर अधंकार होना। परन्तु जब अन्धकार होता है, तो हम उसका शोक नहीं मनाते और न ही उससे लड़ते हैं, अपितु उसे दूर करने का कोई न कोई तरीका ढूंढ़ते हैं और उजाला करते हैं। उसी प्रकार दुःख आने पर अत्यधिक दुखी हो कर या उससे लड़कर हम केवल अपने और अपने परिजनों के दुःख को और बढ़ाते हैं। इसके बजाए यदि हम दुःख और सुख में समभाव लाएं अर्थात् दुःख में अत्यधिक दुखी और सुख में अत्यधिक उन्मादित होने की बजाय प्रकृति के बहाव में बहने तथा अपने जीवन में एक संतुलन बनाने का प्रयास करें तो हम बेहतर महसूस करेंगे और अधिक परिपक्व हो कर अपने आनन्द स्वरूप को सुरक्षित कर पाएँगे।

6. **जाने दो का अभ्यास करें** - हर व्यक्ति की अनेकों स्मृतियां होती हैं। कुछ प्रिय और कुछ अप्रिय। जो अप्रिय संस्मरण हमें दुःख देते हैं, उन्हें हमें अपनी स्मृति पटल से मुक्त करके जाने देना चाहिए। कोई भी घटना जब घटित होती है, तो वह कुछ मिनटों की या कुछ घंटो की अथवा कुछ और अधिक समय की ही होती है। परन्तु हम उसे याद कर-करके और दुखी हो-हो कर अविस्मरणीय करके अमर बना देते हैं और दुखी होते रहते हैं। ऐसी स्मृतियों को हमें जाने देना चाहिए, ताकि हल्के हो कर सुकून से जी सकें और अपने परमानन्द के लक्ष्य को प्राप्त कर सकें।

7. **अपनी आत्मा की आवाज सुने** - हमारी अन्तरात्मा हमारी सबसे सटीक मार्गदर्शक होती है। हमारी बुद्धि सदैव तर्कों से प्रभावित रहती है और हमारे हृदय के फैसले भावनाओं पर आधारित होते हैं। परन्तु हमारी आत्मा सदैव इन सब से अलग हट कर हमें सही-गलत का बोध कराती है। जरूरत है तो अपनी अन्तरात्मा की आवाज को सुन कर समझने की। अपनी आत्मा की आवाज सुनते-सुनते हम अपने ईष्ट के निकट होने लगेंगें और शीघ्र ही अपने ईष्ट के साथ एकाकार हो कर परमानन्द प्राप्त कर सकेंगें।

8. **धन्यवाद का भाव उत्पन्न करें** - जब हम अपनी उपलब्धियों एवं आशीर्वादों के प्रति देवत्व का धन्यवाद करते हैं, तो हम भावविभोर हो उठते हैं क्योंकि धन्यवाद के भाव हमारे अभावों के एहसास को कम करते हैं। साथ ही हमारे चित्त को निर्मल

व अहंकार-मुक्त करके हमें निराकार के निकट ले जाते हैं। उसी प्रकार यदि हम किसी व्यक्ति के प्रति दिल से धन्यवाद करते हैं, तो उसके प्रति हमारी शिकायतें बहुत तुच्छ प्रतीत होती हैं और हमारे रिश्तों की मिठास बरकरार रहती है। इसलिए हमें अपने परिवार, समाज और संपूर्ण सृष्टि के प्रति धन्यवाद के भाव उत्पन्न करने चाहिए ताकि हम सुख एवं संपूर्णता का एहसास करते हुए आनंदित जीवन जियें।

9. **प्रतिदिन कुछ समय प्रार्थना अवश्य करें** – प्रार्थना शीतलता व आनन्द का अविरल स्रोत है। प्रार्थना के लिए किसी विशेष समय, स्थान अथवा कठिन शब्दों की आवश्यकता नहीं होती। अपितु प्रार्थना तो शुद्ध भाव, पूर्ण विश्वास तथा सर्मपण के साथ और सहज व प्रेमपूर्ण एहसास से (शब्द व निःशब्द) कहीं भी और कभी भी की जा सकती है। इस सृष्टि की परमशक्ति के प्रति हमारे अंतर्मन से निकली भावपूर्ण व निष्काम प्रार्थना हमारे चित्त को शांत और निर्मल बना कर आनन्द से भर देती है।

10. **नियमित व्यायाम और प्राणायाम करें** – नियमित व्यायाम और प्राणायाम हमारे शरीर के साथ-साथ हमारे मन को भी स्वस्थ रखता है। हमारा शरीर पुष्ट और मन संयमित हो जाता है। इसलिए हमें अनावश्यक झुंझलाहट नहीं होती, न ही जल्दी से क्रोध आता है। हमारा मन अकारण ही प्रफुल्लित रहता है। इसलिए आनंदित जीवन जीने के लिए नियमित व्यायाम, प्राणायाम अथवा ध्यान अत्यावश्यक है।

अंत में यह कहना सवर्था उचित होगा कि हम अपने सच्चे अस्तित्व को पहचानें, अपनी आत्मा की आवाज सुनें और छोटी-मोटी इच्छाओं में अटक कर बड़े सुख अर्थात् परमानंद को न गवाएं ताकि हम पूर्णतः अपने आनन्द स्वरूप में स्थित हो कर आनंदित जीवन जी सकें और गर्व के साथ कह सकें "आनन्दोऽहम् – आनन्दोऽहम्, आनन्दं परमानन्दम्"।

*****